प्रवेशांक

शोधामृत

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी समीक्षित अर्धवार्षिक मूल्यांकित शोध पत्रिका

Online ISSN-3048-9296
Vol.-1; issue-1 (Jan-Jun) 2024
Page No.-37-42
©2024 Shodhaamrit (Online)
www.shodhamrit.gyanvividha.com

डॉ.अजीता प्रियदर्शनी

सहायक प्राध्यापक,

हिन्दी विभाग,

रमेश झा महिला कॉलेज,सहरसा

Corresponding Author :

डॉ.अजीता प्रियदर्शनी

सहायक प्राध्यापक,

हिन्दी विभाग,

रमेश झा महिला कॉलेज,सहरसा

नागार्जुन की कविताओं का सौन्दर्य बोध

'सौन्दर्य-बोध' किसी वस्तु में सौन्दर्य को देखने और अभिव्यक्ति की क्षमता को कहते हैं। जिस कवि का सौन्दर्य-बोध जितना सूक्ष्म होगा उसकी अभिव्यक्ति उतनी ही प्रभावी होगी। सौन्दर्य-बोध का सम्बन्ध 'काव्य-सौन्दर्य' से होता है या यूँ कहें कि सौन्दर्य-बोध की अभिव्यक्ति किसी भी रचनाकार के'काव्य-सौन्दर्य' या काव्य सौष्ठव को प्रभावशाली बनाता है।

'काव्य-सौन्दर्य' से तात्पर्य किसी कवि की रचना की ऐसी बनावट और बुनावट से है, जो पाठकों को सहज ही प्रभावित करती हो। रचनाकार अपने जीवनानुभवों से प्राप्त ज्ञान और अनुभव को कलात्मक विवेक से सूक्ष्मता से इस तरह अपनी रचना में पिरोता है कि पाठक अनायास ही उससे प्रभावित हो जाता है और वह कलात्मक आनंद की अनुभूति करता है। किसी रचना के इसी प्रभावोत्पादक तत्व या बनावट/बुनावट या संरचना को 'काव्य-सौन्दर्य' के नाम से अभिहित किया जाता है। काव्य-सौन्दर्य के कई उपदान हैं- कथ्य, शिल्प, भाषा, भाव, विषयवस्तु इत्यादि।

हिन्दी साहित्य में कुछ साहित्यकार अपने काव्यगत वैविध्य और काव्य-सौन्दर्य के लिए विशेष स्थान रखते हैं। हिंदी के उन्हीं लब्ध प्रतिष्ठित साहित्यकारों में से एक हैं- वैद्यनाथ मिश्र, जिन्होंने मैथिली में 'यात्री' और हिंदी में 'नागार्जुन' नाम से रचनाएँ की हैं।

नागार्जुन (30 जून 1911 ई.- 5 नवम्बर 1998 ई.) हिन्दी साहित्य की प्रगतिशील काव्यधारा के प्रसिद्ध हस्ताक्षरों में से एक हैं। नागार्जुन मैथिल कोकिल विद्यापति के पश्चात् मिथिलांचल के सबसे प्रसिद्ध और प्रमुख साहित्यकार और बीसवीं शताब्दी के कालजयी रचनाकार हैं। साहित्यकार के रूप में नागार्जुन का काव्यफलक बहुत विस्तृत है। वे अनेक भाषाओँ के जानकार और विद्वान् थे। उन्होंने मुख्यतः चार भाषाओँ-हिन्दी, संस्कृत,मैथिली और बांग्ला में काव्यरचना की है। उनका अधिकांश जीवन साहित्यसाधना, स्वाध्याय और भ्रमण में बीता। प्रखर पांडित्य की सिद्धि के बावजूद उनका सम्पूर्ण साहित्य लोक और जीवन से सरल-सहज संवाद करता दिखता है। उनका व्यक्तिगत जीवन सादगी और संघर्षों की यात्रा रही है, यही सत्य और संघर्ष समर्थ भाषा के माध्यम से उनके साहित्य में अभिव्यक्त है। वे जनकवि थे और इसीलिए वे अपनी रचनाओं के माध्यम से लोक की भाषा में संवाद करना चाहते हैं और इसीलिए भी तथाकथित साहित्य

और व्यक्तिगत जीवन के अभिजात्य से निश्चित दूरी बनाए रखते हैं, यह उनके काव्य-सौन्दर्य की विशेषता में चार चाँद लगाते हैं।

नागार्जुन का लेखन 1930 ई. के आस-पास प्रारंभ माना जाता है। हिन्दी के अलावा संस्कृत,बांग्ला और मैथिली की भी कई रचनाएँ बहुत प्रसिद्ध हैं और मैथिली रचना-'पत्रहीन नग्न गाछ'(1967 ई.), के लिए नागार्जुन को साहित्य अकादमी पुरस्कार (1969 ई.) भी प्राप्त है। हिन्दी में उनकी प्रारंभिक और प्रसिद्ध रचना 'युगधारा'(1953) है। इसके अलावा उनकी हिन्दी की कुछ प्रमुख और प्रसिद्ध काव्य-रचनाएँ/संग्रह हैं- 'प्रेत का बयान'(1957 ई.), 'सतरंगे पंखों वाली'(1959 ई.), 'प्यासी पथराई आँखें'(1962 ई.), 'भस्मांकुर'(खंडकाव्य-1973 ई.), 'खिचड़ी विप्लव देखा हमने'(1980 ई.), 'हजार-हजार बाँहों वाली'(1981 ई.), 'पुरानी जूतियों का कोरस'(1983 ई.), 'रत्नगर्भ'(1984 ई.), 'ऐसे भी हम क्या,ऐसे भी तुम क्या'(1985 ई.), 'ऐसा क्या कह दिया हमने'(1986 ई.) इत्यादि।

किसी भी साहित्य-रचना में सौन्दर्य की अभिव्यक्ति बहुत महत्वपूर्ण है। नागार्जुन न केवल हिन्दी के लब्ध-प्रतिष्ठित साहित्यकार हैं, वरन मैथिली के भी युग-प्रवर्तक रचनाकार हैं। शोषित-समाज की पीड़ा और वर्ग-संघर्ष उनकी कृतियों में पूरे आवेग के साथ उभरकर सामने आए हैं, इसलिए उनके लिए रचना-कर्म जीवन-कर्म, का ही विस्तार बन गया है।

नागार्जुन की कविताएँ आधुनिक हिन्दी साहित्य के प्रगतिवादी विचारधारा का प्रतिनिधित्व करती हैं। इसीलिए उनकी कविताएँ मध्यवर्गीय जीवन की सशक्त अभिव्यक्ति है। मध्यवर्गीय जीवन के त्रासद बिम्ब किसी भी कवि की रचना-प्रक्रिया और उसकी काव्य-सौन्दर्य के महत्त्वपूर्ण उपादान होते हैं। नागार्जुन के रचना-संसार के उस त्रासद जीवन के चित्र अल्प है, किन्तु उस जीवन-शैली एवं मानसिकता से संबंधित कुछ व्यंग्यात्मक बिम्ब अवश्य बड़े मारक हैं। मैनेजर पाण्डेय ने लिखा है कि-"नागार्जुन ने हिंदी में कविता की भूमि का विस्तार किया है। उन्होंने अनेक विषयों पर कविताएं लिखीं जिन पर पहले हिंदी में कविता नहीं लिखी जाती थी। नागार्जुन कविता के लिए वर्जित प्रदेश में कविता को ले गए हैं। उनकी कविता निराला की बनाई हुई काव्य-भूमि का विस्तार भी करती है और उसे अधिक व्यापक बनाती है। नागार्जुन की कविता में विभिन्न सामाजिक वर्गों, समुदायों और जातियों से लेकर जीव-जन्तुओं तक के लिए जगह है। वे अपनी कविता की दुनिया रचते समय बाहर की दुनिया की विविधता और व्यापकता को बराबर ध्यान में रखते हैं।"[1]

नागार्जुन के काव्य के अनुशीलन से हम पाते हैं कि उनकी कविता 'कला जीवन के लिए है' की मान्यता की पुष्टि करती दिखती है। इसीलिए उनकी कविताएँ जीवन से सीधा संवाद करती दिखती है। उनकी कविताएँ जीवन के हर पक्ष का प्रतिनिधित्व करती है। वे अपनी रचनाओं में अपनी प्रतिबद्धता प्रकट करते हुए लिखते हैं-

"प्रतिबद्ध हूँ, जी हाँ प्रतिबद्ध हूँ-

बहुजन समाज की अनुपल प्रगति के निमित्त -

संकुचित 'स्व की आपाधापी के निषेधार्थ...

अविवेकी भीड की 'भेड़िया-धसान' के खिलाफ...

अंध-बधिर 'व्यक्तियों को सही राह बतलाने के लिए...

अपने आप को भी 'व्यामोह' से बारंबार उबारने की खातिर...

प्रतिबद्ध हूँ, जी हाँ शतधा प्रतिबद्ध हूँ"[2]

नागार्जुन के काव्य-सौन्दर्य की विलक्षणता यह है कि उनकी कविताओं में काव्य जगत के ऐसे अछूते और दुर्लभ चित्र मिलते हैं, जो हिन्दी काव्य जगत में मुश्किल ही मिलेंगे। हिन्दी कविता के इतिहास में ऐसी कम ही रचनाएँ मिलती है, जहाँ मादा सूअर की ममता का वर्णन हो या एक रिक्शा चालक के खुरदरे पैर को कविता का विषय बनाया गया है। नागार्जुन के

काव्य-सौन्दर्य यही विशेषता सहज ही पाठकों को प्रभावित करते हैं जहाँ उन्होंने अपनी ऐसी अनगिनत कविताओं में उन विषयों और बिम्बों को साक्षात किया है जो अब तक हाशिये पर थे। कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं-

"धूप में पसारकर लेटी है

मोटी तगड़ी, अधेड़, मादा सुअर....

जमना-किनारे

मखमली दूबों पर

पूस की गुनगुनी धूप में

पसरकर लेटी है

यह भी तो मादरे हिंद की बेटी है

भरे-पूरे बारह थनों वाली!"[3]

एक रिक्शा चालक के खुरदरे पैर का वर्णन कितना मार्मिक और प्रभावी है , इन पक्तियों में देखा जा सकता है-

"खुब गए

दूधिया निगाहों में

फटी बिवाइयोंवाले खुरदरे पैर

धँस गए

कुसुम-कोमल मन में

गुट्ठल घट्ठोंवाले कुलिश-कठोर पैर

दे रहे थे गति

रबड़-विहीन ठूंठ पैडलों को

चला रहे थे

एक नहीं, दो नहीं, तीन-तीन चक्र

कर रहे थे मात त्रिविक्रम वामन के पुराने पैरों को

नाप रहे थे धरती का अनहद फासला

घंटों के हिसाब से ढोए जा रहे थे!"[4]

नागार्जुन प्रगतिशील काव्यधारा के प्रतिनिधि रचनाकार हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं में तथाकथित भद्र-समाज के शिष्ट संभ्रान्त संस्कृति और प्रेम के ढोंग एवं बनावटी रसिकता पर भी करारा व्यंग्य किया है। उनकी कविता में 'पाँखें खजलाई कौए ने', 'रोता रहा चुल्हा', 'चक्की थी उदास' जैसे बिंब हैं। इस बिंब को उपस्थित कर नागार्जुन जहाँ एक ओर तथाकथित प्रगतिशीलों पर अपना निशान साधते हैं, वहीँ दूसरी ओर सभ्य कहे जानेवाले समाज की पूरी मनो-संस्कृति की बखिया उधेड़ कर रख देते हैं। इस कविता का सौन्दर्य अपने वस्तु एवं शिल्प के कारण अनिर्वचणीय है। प्रतीकों का सुन्दर प्रयोग काव्य के सौन्दर्य को द्विगुणित कर देता है। एक ओर भद्र महिला पर अपनी प्रसिद्ध काले-काले भंवरे पर नौकरानी को डपटने की भंगिमा का चित्रण कर

इस वर्ग की मनोवृत्ति पर करारा व्यंग्य किया है।

नागार्जुन सिर्फ वर्ग भेद जैसे विषयों पर टिपण्णी ही नहीं करते अपितु शोषण के खिलाफ क्रांति का समर्थन भी करते हैं और उसके लिए प्रेरित भी। उन्होंने अपनी 'हरिजन गाथा' कविता में शोषित वर्ग में क्रांति चेतना जागृत करने के लिए क्रान्तिचेता शिशु का वर्णन करते हुए लिखा है-

"श्याम सलोना यह अछूत शिशु
हम सब का उद्धार करेगा
आज यह सम्पूर्ण क्रान्ति का
बेड़ा सचमुच पार करेगा
हिंसा और अहिंसा दोनों
बहनें इसको प्यार करेंगी
इसके आगे आपस में वे
कभी नहीं तकरार करेंगी..."[5]

नागार्जुन के काव्य सौन्दर्य में उनकी भाषा का बड़ा योगदान है। उनका स्वयं का कथन है कि- "भाषा बहुत धीरे-धीरे आकार ग्रहण करती है और विकसित होती है। हर भाषा का अपना एक अलग रूप, एक अलग जादू होता है। विषय के अनुसार भाषा अपना रूप बदल लेती है। हमारे सामाजिक संघर्षों में भाषा की भूमिका नींव की तरह है। लेखक भाषा का प्रवर्तक और संरक्षक मा ना जाता है। शब्द कहाँ जाकर चोट करते हैं, यह जानना कठिन है। भाषा गहरी और संप्रेषणीय होने के साथ-साथ सजग होनी चाहिए। सम्प्रेषणीयता के अभाव में भाषा निर्जीव हो जाती है। समय के प्रति चौकस रहते हुए जीवन के प्रति सर्वांग संपन्न दृ ष्टि जरूरी है। पाठक की, आम जनता की एक भाषा होती है। उससे एकदम दूर न हो पर उसका विकास जरूरी है। कविता का अर्थ सपाटबयानी भी नहीं हो सकता। कलात्मक प्रयोग भी एक सीमा तक हो। भाषा में सौंदर्य और व्यंजना तो होनी ही चाहिए।"[6]

नागार्जुन ने काव्य सौन्दर्य के भाषिक संप्रेषण के सन्दर्भ अपना विचार व्यक्त करते हुए लिखा है कि- "भाषिक संरचना तो पाठक को समझनी ही होगी। सम्प्रेषणधर्मी का अर्थ व्यंजना या लक्षणा से विहीन कविता नहीं होती। आपको यदि उनके बीच पहुँचना है तो छंद, तुकबंदी और लय जरूरी है। उनके बीच जाकर और गाकर सुनाने की क्षमता और साहस होना चाहिए। जनता मेरी भी सभी रचनाओं को कहाँ पसंद करती है। जनता हमारे यहाँ इतनी शिक्षित नहीं है कि वह कालिदास के मेघदू त को समझ सके। यह कवि का काम है कि वह अपने को सम्प्रेष्य बनाए। उनके बारे में उनकी ही भाषा में लिखना होगा। कविता अ धिक लंबी न हो और करंट टॉपिक पर होनी चाहिए। गहरी अर्थवत्ता के साथ-साथ कविता सहज और सरल होगी तभी जनसमूह को तरंगित करेगी।"[7]

नागार्जुन के काव्य सौन्दर्य की प्रभावशीलता का निदर्शन उनके व्यंग्यपरक रचनाओं में देख जा सकता है, जहाँ मध्यवर्गीय स्वार्थपरकता एवं छद्म संवेदनशीलता को उजागर करने के लिए उनका व्यंग्य बड़ा कारगर सिद्ध हुआ है । मध्यवर्गीय समाज में साहित्यकार की कितनी इज्जत और कैसी हैसियत होती है, उस पर नागार्जुन ने व्यंग्यात्मक ढंग से चोट किया है, जो कर्म पैसे न बरसाये, वह इस वर्ग के लिए ओछा और बैठे-ठाले का काम है, फिर चाहे उस कार्य को संपदित करने में कोई अपने जीवन, सर्वस्व निछावर कर दे। कुछ प्रश्न, छोड़ी नाटकीय संयोजन के बल पर पूरी मध्यवर्गीय चरित्र के तहेदार परतो को एक-एक नागार्जुन उघाड़ते हैं। यही उनकी खूबी है। अन्य कई कविताओं में भी नागार्जुन इसी मध्यवर्गीय मानसिकता का जायजा लेते हुए जन और

भद्र के पार्थक्य को रेखांकित करते हैं।

नागार्जुन अपने समाज की परिस्थिति सिर्फ द्रष्टा नहीं हैं, बल्कि उसमें परिवर्तन लाने के लिए उद्यम भी करते दीखते हैं। वो समाज में बनावटीपन की पहचान करते हैं और फिर उसपर तीखा व्यंग्य भी। यह व्यंग्य उनके काव्य-सौन्दर्य को और प्रभावी बना देता है। इस सन्दर्भ में उनकी एक महत्त्वपूर्ण कविता है 'घिन तो नहीं आती है-

"पूरी स्पीड में है ट्राम

खाती है दचके पै दचका

सटता है बदन से बदन-

पसीने से लथपथ।

छूती है निगाहों को

कत्थई दाँतों की मोटी मुस्कान

बेतरतीब मूँछों की थिरकन

सच-सच बतलाओ

घिन तो नहीं आती है?

जी तो नहीं कुढ़ता है?"[8]

नागार्जुन एक प्रतिबद्ध काव्यकार के साथ एक कुशल भाषा शिल्पी और शैलीकार भी हैं। अपने काव्य की भाषा और शैली के चुनाव में वे अत्यन्त सजग और सावधान दिखाई देते हैं जैसा कि उन्होंने स्वयं कहा है। उन्होंने भाव के अनुरूप भाषा को अपनाया।

नागार्जुन के काव्य सौन्दर्य का जितना संवेदना पक्ष मज़बूत है, उतना ही अभिव्यक्ति पक्ष भी। उनके अभिव्यक्ति पक्ष की सबसे मज़बूत कड़ी उनकी भाषा है जो कई स्तरों पर विशिष्ट और मौलिक प्रयोगों से युक्त है। रामविलास शर्मा मानते हैं कि -

"उनकी कविताएँ लोक संस्कृति के इतना नज़दीक है की इसी का एक विकसित रूप मालूम होती है।"[9]

अपनी काव्यभाषा के सन्दर्भ में नागार्जुन ने स्वयं लिखा है-, "भाषा की तराश या बुनावट के लिए इलाहाबाद की भाषा को हम प्रमाण मानते हैं। घुमंतू जीवन रहा, तो जगह-जगह के मुहावरे भी लिए हैं। जो मजदूरों को सुनानी है, उसमें शब्दों की कसावट को ढिला कर दिया है।"[10]

इसी प्रकार नागार्जुन ने अपनी कविताओं में प्रतीक योजना का बहुत सहज और सुन्दर प्रयोग किया है। 'हरिजन गाथा' में कृष्णावतार के मिथकीय प्रतीक का प्रयोग किया गया है, 'बादल को घिरते देखा है' में बादल को क्रांति के प्रतीक के रूप में पेश किया गया है। इसी प्रकार 'अकाल और उसके बाद' में आंगन से ऊपर उठना, कौए का पंख खुजलाना जैसे प्रतीक प्रस्तुत किये गए हैं।

नागार्जुन मुख्यतः प्रगतिवादी, मार्क्सवादी और जनवादी विचारधारा के कवि रहे हैं, इसलिए अधिकांशतः उनकी शब्दावली प्रखर और ओजपूर्ण ही रही है, किन्तु उन्होंने अपने काव्य में कोमलकांत पदावली का भी सुन्दर प्रयोग किया है। 'बादल को घिरते देखा है' एवं 'दन्तुरित मुस्कान' आदि कविताओं में कोमलकांत पदावली कासुन्दर प्रयोग मिलता है। रूप के साथ व्यंग्य की धार अवलोकनीय है-

"मधुर-मदिर भ्रम हमें मुबारक, तुम्हें मुबारक सपने

देवि, संभालो यहाँ वहाँ नव सामंतो को अपने"[11]

डॉ. नामवरसिंह ने लिखा है –"वैसे नागार्जुन में ऊबड़-खाबड़पन भी कम नहीं है और उसके कारण कवि-कोविदों के बीच उन्हें प्रतिष्ठा प्राप्त होने में भी विलम्ब हुआ, किंतु भाव स्थिर होने और सुर सध जाने पर ऐसी ढली-ढलाई कविता निकली है कि बड़े से बड़े कवि को भी ईर्ष्या हो। कहना न होगा कि नागार्जुन में ऐसी कलापूर्ण कविताएँ काफ़ी है।"[1] [2]

इस प्रकार हम देखते हैं कि नागार्जुन का काव्य-सौन्दर्य अपने समय-सन्दर्भों और विषय वैविध्य के अनुकूल और विविधतापूर्ण है। वे जनता के कवि थे, जनकवि थे इसलिए एक आम आदमी की समस्याओं और उनके समय-सन्दर्भों की अभिव्यक्ति उनके काव्य सौन्दर्य की खूबसूरती में चार चाँद लगाती है। उनकी काव्यभाषा आद्यांत विषय के अनुकूल और उनके भावो को अभिव्यक्ति देने में प्रखर, समर्थ और सक्षम दिखती है और उनके काव्य सौन्दर्य को द्विगुणित करती है।

सन्दर्भ सूची:-

1. मैनेजर पाण्डेय, संकलित निबंध, नेशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया, पृष्ठ 164-165.
2. प्रतिबद्ध हूँ, प्रतिनिधि कविताएँ, नागार्जुन, संपादक - डॉ.नामवर सिंह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, उनतीसवां संस्करण : 2023, पृष्ठ-15.
3. पैने दांतोवाली, प्रतिनिधि कविताएँ , नागार्जुन, संपादक - डॉ.नामवर सिंह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, उनतीसवां संस्करण : 2023, पृष्ठ-80.
4. खुरदरे पैर, प्रतिनिधि कविताएँ, नागार्जुन, संपादक - डॉ.नामवर सिंह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, उनतीसवां संस्करण : 2023, पृष्ठ-35.
5. हरिजन गाथा, प्रतिनिधि कविताएँ, नागार्जुन, संपादक - डॉ.नामवर सिंह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, उनतीसवां संस्करण : 2023, पृष्ठ-141.
6. चौधरी डॉ. दिवाकर, "नागार्जुन की काव्यभाषा" "ज्ञानविविधा,वर्ष-1, अंक-3, अप्रैल-जून-2024, पृष्ठ :-23.
7. उपरिवत, पृष्ठ :-23.
8. घिन तो नहीं आती है?, खुरदरे पैर, प्रतिनिधि कविताएँ, नागार्जुन, संपादक - डॉ.नामवर सिंह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, उनतीसवां संस्करण : 2023, पृष्ठ-36.
9. चौधरी डॉ. दिवाकर, "नागार्जुन की काव्यभाषा" "ज्ञानविविधा, वर्ष-1,अंक-3, अप्रैल-जून-2024, पृष्ठ :-24.
10. उपरिवत, पृष्ठ :-24.
11. नागार्जुन.तुमने कहा था, वाणी प्रकाशन,1980, पृष्ठ-49.
12. चौधरी डॉ. दिवाकर, "नागार्जुन की काव्यभाषा" "ज्ञानविविधा, वर्ष-1, अंक-3,अप्रैल-जून-2024, पृष्ठ :-25.